THE ECONOMIC TIMES

Date: 03-07-26

Control Encroaching Coaching Centres

ET Editorials

In most Indian homes, post-school hours no longer belong to youngsters. Recreation gives way to coaching centres. For many, this cycle begins in middle school, intensifies through senior school, and extends into the race for competitive recruitment exams. Coaching has evolved from a supplementary aid into a vast parallel education system. Against this backdrop, a draft report by a Union education ministry committee proposes a national law to regulate coaching centres while making tests like JEE, NEET and CUET less 'coachable'. Crucially, it recognises that the industry's explosive growth reflects deeper distortions in our education and admissions system.

The national 2024 model guidelines proposed mandatory registration, infrastructure and safety norms, transparent fee policies, counselling services, and age restrictions. Central Consumer Protection Authority has cracked down on misleading ads, while several states have enacted laws to regulate coaching institutes. Authorities have also acted against dummy schools that allow students to bypass regular schooling altogether. But the industry keeps expanding because regulation has focused on coaching centres, rather than incentives driving students towards them. The next phase of reform must address those structural incentives.

Making entrance tests more conceptual and less amenable to pattern-based preparation is an important start. Equally critical is strengthening school education so that classrooms, not coaching institutes, become primary sites of learning. Eliminating the dummy-school ecosystem is a must. Without addressing these systemic issues, a regulatory framework risks becoming yet another well-intentioned intervention that leaves coaching culture pretty much unchanged.

दैनिक भास्कर

Date: 03-07-26

बड़े संकट में भी संभलने का कौशल देश ने दिखाया है

संपादकीय

ईरान युद्ध से दुनिया में आपूर्ति संकट आया संपन्न यूरोप से लेकर अनेक विपन्न एशियाई, अफ्रीकी और दक्षिणी अमेरिकी देशों ने इसे अलग-अलग रूप में झेला। लेकिन भारत में आम जनता पर इसका वैसा असर नहीं दिखाई दिया। इसका कारण था पिछले दो दशकों से बढ़ता विदेशी मुद्रा भंडार। चूंकि आपूर्ति संकट से तेल के भाव बढ़े, अन्य उत्पादों पर भी ज्यादा डॉलर देना पड़ा, लिहाजा इस व्यय का बड़ा बोझ इस भंडार ने सह लिया। लेकिन बात सिर्फ इतनी नहीं। डेढ़ साल से ट्रम्प ने टैरिफ के नाम पर भारत-अमेरिका ट्रेड का गला घोंटने की कोशिश की लेकिन भारत ने विकल्प तलाशे तमाम मुल्कों से फ्री ट्रेड एग्रीमेंट कर नए आयाम खोजे। अमेरिकी दबाव पर पूरी तरह आत्मसमर्पण न करते हुए रूस से रिश्ते बहाल रखे, भले ही तेल की खरीद में कुछ समय के लिए शिथिलता बरती। कुल मिलाकर न तो ट्रम्प का टैरिफ टेररिज्म भारत को डरा सका, ना ही युद्ध-जनित संकट से आपूर्ति इतनी प्रभावित हुई। प्रारम्भिक समस्या दैनिक बाइंग (घबराहट में खरीद) से थी। कुछ कुकिंग गैस कंपनियों को भी प्रबंधन में समय लगा। यह सच है कि आपूर्ति में कमी से बढ़े मूल्यों से सरकार को बुनियादी ढांचे की परियोजनाओं पर खर्च कम करना पड़ेगा। महंगाई भी असर डालेगी। लेकिन 144 करोड़ लोगों का जीवन किसी बड़े झंझावात से बचा रहा, ये आशाजनक है।

Date: 03-07-26

नागरिकों को भरोसे के दायरे में जीना चाहिए या संदेह के?

पवन के. वर्मा, (पूर्व राज्यसभा सांसद व राजनयिक)

एक राजनयिक के रूप में मेरी विदेशों में नियुक्तियां रही हैं और मैंने दुनिया की यात्रा की है। मेरे पासपोर्ट में मुझे भारत-गणराज्य का नागरिक, एक उभरती हुई शक्ति और महान सभ्यता का प्रतिनिधि बताया जाता रहा।

वह मेरे लिए गर्व का विषय रहा है। इसीलिए जब हाल ही में विदेश मंत्रालय ने कहा कि पासपोर्ट नागरिकता का प्रमाण नहीं है, तो मैं उलझन में पड़ गया।

सरकार के अपने कारण हो सकते हैं, लेकिन दशकों तक भारतीयों की यह समझ रही है कि पासपोर्ट उनकी नागरिकता की औपचारिक पुष्टि है। इसे प्राप्त करने की प्रक्रिया से पहले व्यापक जांचें होती हैं। आवेदकों को दस्तावेज प्रस्तुत करने, अपनी पहचान स्थापित करने, निवास का प्रमाण देने और पुलिस सत्यापन से गुजरना पड़ता है। पासपोर्ट केवल इसलिए जारी नहीं किया जाता कि कोई व्यक्ति विदेश यात्रा करना चाहता है, बल्कि इसलिए किया जाता है कि राज्यसत्ता इस बात से संतुष्ट होती है कि आवेदक भारतीय नागरिक है। वास्तव में, पासपोर्ट अधिनियम की धारा 6(2)(ए) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि पासपोर्ट केवल भारत के नागरिक को ही जारी किया जा सकता है।

इस दस्तावेज का भावनात्मक महत्व उसकी प्रशासनिक उपयोगिता से भी अधिक था। यह व्यक्ति और राष्ट्र के बीच एक संबंध का प्रतिनिधित्व करता था। विदेश यात्रा करने वाले भारतीयों के लिए यह केवल एक पुस्तिका नहीं, बल्कि पहचान और अपनेपन की घोषणा थी। यह सच है कि तथ्यों को छिपाकर, दस्तावेजों की जालसाजी करके या अपनी पहचान के बारे में गलत जानकारी देकर धोखाधड़ीपूर्वक भी पासपोर्ट प्राप्त किए जा सकते हैं। ऐसी परिस्थितियों में राज्यसत्ता को पासपोर्ट रद्द करने और दोषी के विरुद्ध अभियोजन चलाने का पूरा अधिकार है। लेकिन इस आधार पर इस धारणा को खारिज नहीं किया जाना चाहिए कि विधिसम्मत प्रक्रिया के तहत जारी किया गया एक वैध पासपोर्ट नागरिकता का प्रमाण है।

मतदाता पहचान-पत्र भी धोखाधड़ी से प्राप्त किया जा सकता है। राशन कार्ड में भी हेरफेर किया जा सकता है। आधार कार्ड का भी दुरुपयोग किया जा सकता है। संपत्ति संबंधी दस्तावेजों की जालसाजी की जा सकती है। भारत में दस्तावेजीकरण की वर्तमान स्थिति के संदर्भ में यह प्रश्न और अधिक चिंताजनक हो जाता है। आधार नागरिकता का प्रमाण नहीं है। मतदाता पहचान-पत्र नागरिकता का प्रमाण नहीं है। राशन कार्ड नागरिकता का प्रमाण नहीं है। जन्म प्रमाण-पत्रों को भी अक्सर प्रक्रियात्मक आधारों पर चुनौती दी जाती है। अब यदि पासपोर्ट भी नागरिकता का प्रमाण नहीं है, तो प्रश्न उठता है कि नागरिकता का प्रमाण है क्या?

कोई भी आधुनिक राष्ट्र अस्पष्टता के आधार पर कार्य नहीं कर सकता। नागरिकता कोई हवा-हवाई चीज नहीं है, इसी पर अंततः सभी संवैधानिक अधिकार आधारित होते हैं। मताधिकार का प्रयोग करने, कानूनी संरक्षण का दावा करने, सरकारी लाभ प्राप्त करने या संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों का उपभोग करने से पहले किसी व्यक्ति का नागरिक के रूप में मान्यता प्राप्त होना आवश्यक है। यदि कोई भी दस्तावेज इस स्थिति को निर्णायक रूप से स्थापित नहीं करता, तो दारोमदार व्यक्ति पर आ जाता है। कहां तो राज्यसत्ता को ही अपनी संस्थाओं और दस्तावेजों के माध्यम से नागरिक की नागरिकता प्रमाणित करनी चाहिए थी, लेकिन इसके बजाय नागरिक को बार-बार यह सिद्ध करने के लिए बाध्य होना पड़ता है कि वह इसी देश का है।

जब राज्य स्वयं उन दस्तावेजों को जारी करने के बावजूद- जो परंपरागत रूप से नागरिकता को प्रमाणित करते रहे हैं- नागरिकता पर प्रश्न उठाता है, तो नागरिक अनिश्चितता की स्थिति में पहुंच जाता है। उसके पास दस्तावेज तो होते हैं, पर नाकाफी। वह प्रक्रियाओं का पालन करता है, लेकिन कोई निश्चितता प्राप्त नहीं होती। यदि नागरिकता विवाद का विषय बनी रहती है, तो अधिकारियों को अतिरिक्त प्रमाण मांगने का अधिक अधिकार मिल जाता है। नागरिक मनमानी व्याख्याओं और नौकरशाही की संतुष्टि पर निर्भर हो जाते हैं।

अमेरिका, यूके, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया सहित अनेक देशों में पासपोर्ट को नागरिकता के सशक्त प्रमाण के रूप में स्वीकार किया जाता है, क्योंकि उसे जारी करने से पहले नागरिकता का सत्यापन किया जाता है। वास्तविक समाधान दस्तावेज जारी करने के समय जांच-प्रक्रिया को अधिक सुदृढ़ बनाने, सत्यापन तंत्र में सुधार करने, विभिन्न डेटाबेसों का एकीकरण करने तथा धोखाधड़ी के विरुद्ध कठोर दंड लागू करने में निहित है। इस बहस के केंद्र में एक और प्रश्न निहित है। लोकतंत्र में नागरिक को वैधता की पूर्व-धारणा के साथ जीना चाहिए या संदेह की?

दैनिक जागरण

Date: 03-07-26

सड़क सुरक्षा बोर्ड

संपादकीय

किस तरह कुछ आवश्यक मामलों में भी समय पर कदम उठाने से बचा जाता है, इसका ही उदाहरण है लंबी देरी के बाद राष्ट्रीय सड़क सुरक्षा बोर्ड के गठन की अधिसूचना जारी होना। इससे खराब बात और कोई नहीं हो सकती कि सात वर्ष की प्रतीक्षा के बाद इस बोर्ड का गठन किया जा सका और वह भी तब, जब सुप्रीम कोर्ट ने इस बोर्ड के गठन में देरी को लेकर अप्रसन्नता व्यक्त की। कायदे से इस बोर्ड का गठन 2019 में तभी कर दिया जाना चाहिए था, जब मोटर यान अधिनियम में संशोधन कर इसके लिए प्रविधान किए गए थे। इस बोर्ड के गठन में देरी यही बताती है कि हमारे नीति-नियंता सड़क दुर्घटनाओं को नियंत्रित करने के मामले में संवेदनशील नहीं। इससे संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता कि आखिरकार इस 20 सदस्यीय बोर्ड का गठन कर दिया गया, क्योंकि बात तब बनेगी, जब यह बोर्ड प्रभावी परिणाम देने में समर्थ भी होगा। इस बोर्ड के सदस्यों में सड़क इंजीनियरिंग और यातायात प्रबंधन से जुड़े विशेषज्ञ शामिल होंगे। इसमें विभिन्न राज्यों के परिवहन आयुक्त और राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के अधिकारी भी होंगे। यह बोर्ड केंद्र और राज्य सरकारों के साथ स्थानीय निकायों को यातायात प्रबंधन संबंधी तकनीकी सलाह और सहायता देने के साथ राष्ट्रीय राजमार्गों के सुरक्षित डिजाइन, निर्माण, रखरखाव आदि

के न्यूनतम सुरक्षा मानक भी निर्धारित करेगा। इसके अतिरिक्त यह बोर्ड सड़क दुर्घटना के पीड़ितों की मदद करने वाले नागरिकों को प्रोत्साहित करने वाली नीतियां बनाने के भी सुझाव देगा।

समझना कठिन है कि बेलगाम मार्ग दुर्घटनाओं के बाद भी सड़क सुरक्षा बोर्ड के गठन में देरी क्यों हुई? यह काम तो बहुत पहले हो जाना चाहिए था, क्योंकि देश में वर्ष दर वर्ष मार्ग दुर्घटनाएं बढ़ती जा रही हैं। इन दुर्घटनाओं में मरने और घायल होने वालों की संख्या विश्व में सबसे अधिक है। मार्ग दुर्घटनाओं के मामले में भारत का रिकार्ड बेहद खराब ही नहीं, बल्कि शर्मनाक भी है, क्योंकि देश में वाहनों की संख्या कई देशों से कम हैं। मार्ग दुर्घटनाओं के कारण किसी से छिपे नहीं। खराब सड़कें, खटारा वाहन, अकुशल चालक, यातायात नियमों की अनदेखी आदि सड़क दुर्घटनाओं के प्रमुख कारण हैं। क्या राष्ट्रीय सड़क सुरक्षा बोर्ड ऐसे उपाय कर सकेगा, जिनसे इन कारणों का निवारण हो सके? यह प्रश्न इसलिए, क्योंकि जब तक मार्ग दुर्घटनाओं के जाने-पहचाने कारणों का निवारण करने में लापरवाही का परिचय देने वाले अधिकारियों और विभागों को जवाबदेह नहीं बनाया जाएगा, तब तक हालात बदलने वाले नहीं हैं। इसलिए और नहीं, क्योंकि सुरक्षित यातायात के लिए जैसी राजनीतिक एवं प्रशासनिक इच्छाशक्ति चाहिए, उसका अभाव ही अधिक दिखता है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 03-07-26

एआई का बढ़ता दबाव

संपादकीय

बीते कुछ महीने आमतौर पर भारतीय शेयर बाजारों के लिए मंदी वाले रहे है| सुचना प्रौद्योगिकी उद्योग इससे खास तौर पर प्रभावित रहा। वर्ष 2026 की पहली छमाही में जहां बेंचमार्क बीएसई सेंसेक्स ने करीब 10 फीसदी गिरावट देखी, वहीं आईटी सूचकांक 30 फीसदी से अधिक गिरा। यह इस क्षेत्र की उल्लेखनीय गिरावट को दर्शाता है गिरावट का यह सिलसिला पश्चिम एशिया संकट के पहले शुरू हुआ था। इस संकट ने भूराजनीतिक जोखिम और मंदी के रुझान और बढ़ा दिए। आईटी क्षेत्र में गिरावट की कई वजह हैं। यह क्षेत्र कई सालों तक वृद्धि का वाहक और रोजगार तैयार करने वाला रहा है। भारतीय आईटी सेवा उद्योग कई मसलों से जूझ रहा है उनमें से एक है भूराजनीतिक तनावों के कारण उत्पन्न वृहद आर्थिक अनिश्चितता । कुछ बड़ी आईटी कंपनियों के मुताबिक इसने ग्राहकों के विवेकाधीन व्यय में सतर्कता उत्पन्न की है।

मंदी का बड़ा कारण निवेशकों की अपेक्षाओं का आईटी इकोसिस्टम के इर्द-गिर्द पुनसंयोजन है भारत का आईटी क्षेत्र लागत प्रभावी सेवाएं प्रदान करने पर आधारित है और यही वह खंड है जिस पर आर्टिफिशल इंटेलिजेंस

(एआई) के आगमन और काम के क्लाउड की ओर स्थानांतरण का सबसे अधिक प्रभाव पड़ने के आसार हैं। एक अन्य योगदान कारक है वैश्विक क्षमता केंद्र (जीसीसी) मॉडल की बढ़ती लोकप्रियता जहां बहुराष्ट्रीय कंपनियां (एमएनसी) आईटी क्षमताओं को स्वयं विकसित करना पसंद करती हैं।

एआई के आगमन ने कई आईटी सेवाओं के खंडों में मार्जिन कम कर दिया है और एआई कोडिंग अब बड़ी संख्या में भारत की कंपनियों में काम करने वाले कोडरों की जगह लेने लगी है। इससे ढांचागत बदलाव हुए हैं। कहा जा सकता है कि कार्यबल पर एआई का प्रभाव 2024-25 (वित्त वर्ष 25) से ही आंकड़ों में दिखाई देने लगा था। उसी समय आईटी कंपनियों में नए काम करने वालों की संख्या में कमी शुरू हुई। यह कम भर्ती का रुझान वित्त वर्ष 26 तक जारी रहा और वित्त वर्ष 27 तथा आगे भी जारी रहने के आसार हैं। इसके अलावा सख्त वैश्विक बाजार और आईटी सेवा प्रदाताओं के बीच उच्च प्रतिस्पर्धा की स्थिति में एआई से उत्पन्न किसी भी दक्षता सुधार को ग्राहकों तक पहुंचा दिया जा रहा है। परिणामस्वरूप मार्जिन दबाव में हैं। इसलिए निवेशक निकट भविष्य में कमाई में वृद्धि के अनुमानों को घटा रहे हैं।

नए एआई मॉडलों को लेकर उत्साह उचित ही है। इसने कोड लिखने में लगने वाला वक्त कम कर दिया है और बग्स का पता लगाने में भी इसने अभूतपूर्व क्षमता का प्रदर्शन किया है। इससे वह चिंता बढ़ी है कि एआई को अपनाने से कुछ समय तक अपस्फीतिकारी प्रभाव जारी रहेंगे, जिसके परिणामस्वरूप कमाई की अपेक्षाओं में कटौती और उन आईटी कंपनियों के लिए कम मूल्यांकन गुणक होंगे जो एआई के मामले में अग्रणी स्तर पर नहीं हैं। इस क्षेत्र में भारतीय कंपनियों को व्यापक रूप से आगे बढ़ने की कोशिश करते हुए देखा जा रहा है। आम सहमति यह है कि सेवाओं के क्षेत्र में वृद्धि कमजोर बनी रहेगी जब तक कि एआई को अपनाने का अगला चरण शुरू नहीं होता। अंततः अधिक चुस्त आईटी सेवा प्रदाता एआई की निगरानी करते हुए नई भूमिकाएं बनाने में सक्षम हो सकते हैं।

अधिकांश उद्योग विशेषज्ञ इस बात पर सहमत हैं कि एआई अंततः उत्पादकता लाभ और बाजार विस्तार दोनों प्रदान करेगा। लेकिन ये लाभ कुछ समय बाद ही आएंगे तब तक मूल्यांकन कम रह सकते हैं। वर्तमान सलाह ग्राहकों की विवेकाधीन खर्च पर सतर्कता बनाए रखने की ओर इशारा करती है राजस्व वृद्धि की अनुपस्थिति में, मार्जिन के दबाव में बने रहने की आशंका है और कमजोर रुपया केवल आंशिक राहत देगा। इस प्रकार वित्त वर्ष 27 की पहली छमाही के लिए आम सहमति या उम्मीदें बहुत कम हैं। मध्यम अवधि में बहुत कुछ इस पर निर्भर करेगा कि एआई क्षेत्र कैसे विकसित होता है और भारतीय कंपनियां कैसे अनुकूलन और नवाचार करती हैं।

शुचिता की राह

संपादकीय

देश की राजनीति में जवाबदेही और पारदर्शिता लाने के मसले पर लंबे समय से बहस चलती रही है, लेकिन अब तक कोई ऐसा खाका सामने नहीं आ सका है, ताकि सिर्फ स्वच्छ छवि के लोगों को ही जनप्रतिनिधि बनने का अवसर मिले। आए दिन संसद और विधानसभाओं में आपराधिक पृष्ठभूमि से आने के बावजूद चुने गए जनप्रतिनिधियों की बढ़ती संख्या को लेकर चिंता तो जताई जाती है, मगर उसके हल को लेकर कोई ठोस पहल नहीं होती। संविधान के तहत केवल दोषी ठहराए गए जनप्रतिनिधियों को ही पद से हटाया जा सकता है और इस संबंध में संवैधानिक पद पर बैठे नेताओं को लेकर कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है। इसी संदर्भ में केंद्र सरकार फिर से एक सौ तीसवें संविधान संशोधन विधेयक को संसद में पेश कर सकती है, जिसके तहत प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री या अन्य मंत्रियों को पांच साल से ज्यादा सजा के प्रावधान वाले गंभीर अपराधों के लिए गिरफ्तार किए जाने और लगातार तीस दिनों तक हिरासत में रखे जाने पर पद से हटाने का प्रस्ताव है। अगर विधेयक की जांच के बाद संयुक्त संसदीय समिति इसे अपनी मंजूरी दे देती है, तो संसद के मानसून सत्र में इस पर बहस की संभावना है।

गौरतलब है कि पिछले वर्ष अगस्त में केंद्रीय गृहमंत्री ने संसद में यह विधेयक पेश किया था। हालांकि विपक्षी दलों की ओर से उठाई गई कई आपत्तियों के बाद इसकी जांच के लिए संयुक्त संसदीय समिति का गठन किया गया था, लेकिन कांग्रेस सहित ज्यादातर विपक्षी दलों ने अपनी चिंताओं को नजरअंदाज किए जाने की आशंका के मद्देनजर समिति का बहिष्कार कर दिया था। इसमें कोई दोराय नहीं कि भारतीय राजनीति में आपराधिक पृष्ठभूमि के लोगों का बढ़ता दखल आज एक गंभीर समस्या बन चुका है। मौजूदा कानूनी प्रावधानों के तहत तकनीकी जटिलताओं का लाभ उठा कर कई बार ऐसे लोग भी चुन कर संसद या विधानसभाओं में आ जाते हैं, जिन पर जघन्य अपराधों में शामिल होने का आरोप होता है। अक्सर सामने आने वाली रिपोर्ट में खासी संख्या में दागी जनप्रतिनिधियों के विधायिका में पहुंचने का ब्योरा होता है, जिस पर सभी दल चिंता जताते हैं, लेकिन ऐसे लोगों को टिकट न देने को लेकर किसी के भीतर कोई इच्छाशक्ति नहीं दिखती। दूसरी ओर, चुनाव आयोग भी इस मसले पर कोई स्पष्ट रुख अख्तियार नहीं करता है।

इस लिहाज से देखें, तो सार्वजनिक जीवन में जवाबदेही बढ़ाने से लेकर लोकतंत्र में नैतिकता और शुचिता सुनिश्चित किए जाने के लिए एक सख्त नियमन वक्त की जरूरत है। मगर यह ध्यान रखने की जरूरत है कि नया कानून देश के लोकतांत्रिक ढांचे पर विपरीत प्रभाव डालने वाला न हो। दरअसल, विपक्षी दलों की ओर से प्रस्तावित कानून के प्रावधानों को अलोकतांत्रिक और संघीय ढांचे तथा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के खिलाफ बताया जा रहा है, जिसमें किसी आरोप के बाद दोषसिद्धि के बजाय सिर्फ हिरासत के आधार पर दंडित किए जाने की व्यवस्था है। आशंका यह जताई जा रही है कि सत्ताधारी दल की ओर से जांच एजेंसियों का बेजा इस्तेमाल करके राजनीतिक

विरोधियों को गिरफ्तार कराया जा सकता है। ऐसे में चुनी हुई सरकारों के सामने भी अस्थिरता का संकट पैदा हो सकता है। जाहिर है, देश की राजनीति को आपराधिक छवि के लोगों से मुक्त करना जरूरी है, लेकिन इसके लिए जो कानून बने, उसमें अपराधों की प्रकृति स्पष्ट किए जाने से लेकर ऐसे सुरक्षा उपाय सुनिश्चित किए जाने की जरूरत है, ताकि महज बदले या किसी सरकार को अस्थिर करने की मंशा से इसका दुरुपयोग न हो सके।

Date: 03-07-26

अंतरिक्ष में कचरा

संपादकीय

पृथ्वी की कक्षा में जिस रफ्तार से अंतरिक्ष कचरा बढ़ रहा है, इसका अनुमान उन देशों ने नहीं लगाया होगा जो संचार संबंधी जरूरतों और सामरिक आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए वर्षों से उपग्रह भेजते रहे हैं। इन कचरों की वजह से पृथ्वी के लिए जोखिम पैदा होने की फिलहाल तो कोई आशंका नहीं है, लेकिन आने वाले वर्षों में अंदेशा नहीं गहराएगा, यह नहीं कहा जा सकता। दरअसल, अंतरिक्ष मलबे को साफ करने में न तो किसी की रुचि हैं और न ही इस संबंध में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया कारगर साबित हुई है। खबरों के मुताबिक अंतरिक्ष में दस सेंटीमीटर से बड़े छत्तीस हजार टुकड़े तैर रहे हैं जबकि इसके कणों की संख्या करोड़ों में है। इस पूरे मलबे का वजन तेरह हजार टन से अधिक है। विचित्र बात है कि तमाम देश सैन्य, संचार, कृषि, मौसम और सैन्य एवं खुफिया जानकारियों के लिए अंतरिक्ष में अपने उपग्रह तो भेजते है, लेकिन मियाद खत्म होने के बाद उसके निपटान की कोई तैयारी नहीं करते। कचरे की समस्या इसी वजह से बढ़ी है।

चिंता की बात यह कि कई निजी कंपनियां भी व्यावसायिक उपग्रह अंतरिक्ष भेज रही हैं, लेकिन इस समस्या को लेकर उनके पास भी कोई योजना नहीं है। उनका एकमात्र लक्ष्य अपना दबदबा कायम करना है। नतीजा यह कि इस समय पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे उपग्रहों की संख्या पंद्रह हजार से अधिक हो चुकी है। इनमें दस हजार उपग्रह तो स्पेसएक्स कंपनी के हैं जो भविष्य में बड़ी संख्या में उपग्रह भेजने की योजना बना रही है। इससे आने वाले वर्षों में अंतरिक्ष कचरे की संख्या बेतहाशा बढ़ेगी। ये इसलिए खतरनाक बताए जा रहे हैं, क्योंकि ये सात किलोमीटर प्रति सेकंड की रफ्तार से घूम रहे हैं। इस कचरे को निपटाने के तरीके सुरक्षित नहीं हैं। पृथ्वी के वायुमंडल में धकेले जाने के बाद ये जल जरूर जाते हैं, लेकिन इससे कार्बन कण पैदा होने के कारण ओजोन परत पर असर पड़ता है। आखिरकार इसकी कीमत मनुष्यों को चुकानी पड़ेगी। इस कचरे को साफ करने की ठोस योजना नहीं बनी, तो अंतरिक्ष से लेकर पृथ्वी तक आशंका के बादल मंडराते रहेंगे।

Date: 03-07-26

ग्राम पंचायतें और आत्मनिर्भरता का सवाल

अमरपाल सिंह वर्मा

सरकार ग्राम पंचायतों को आत्मनिर्भर बनाना चाहती है। इसके लिए हाल में जरूरी दिशा-निर्देश जारी किए गए हैं। सरकार का मानना है कि देश में बदलाव की असली शुरुआत गांवों से ही संभव है। इसी सोच के तहत अब ग्राम पंचायतों को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने पर बल दिया जा रहा है। इसके पीछे तर्क है कि यदि पंचायतें अपने स्रोतों से आय अर्जित करेंगी, तो वे अपने क्षेत्र की जरूरतों के अनुसार सड़क, पेयजल, सफाई, प्रकाश व्यवस्था और अन्य बुनियादी सुविधाओं पर खर्च कर सकेंगी। इससे विकास कार्यों में तेजी आएगी, सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार होगा और सरकारी अनुदानों पर निर्भरता कम होगी सरकार का वह भी मानना है कि मजबूत और आत्मनिर्भर पंचायतें ही विकसित भारत के सपने को साकार कर सकती हैं, लेकिन क्या पंचायतों को आत्मनिर्भर बनाना वास्तव में इतना आसान है ?

यह सवाल इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि आजादी के बाद से गांवों के विकास की जो व्यवस्था बनी, उसमें पंचायतों की भूमिका तो बढ़ती गई, लेकिन उनकी आर्थिक ताकत उतनी नहीं बढ़ पाई। पंचायतों के कामकाज का बड़ा हिस्सा केंद्र और राज्य सरकारों से मिलने वाले अनुदानों पर निर्भर रहा है। आज भी अधिकांश पंचायतें स्वयं की आय के बजाय सरकारी योजनाओं और अनुदानों पर अधिक निर्भर हैं। ऐसे में पंचायतों से आत्मनिर्भरता की दिशा में आगे बढ़ने की अपेक्षा पर सवाल उठने स्वाभाविक हैं।

सरकार का कहना है कि आर्थिक आत्मनिर्भरता का मतलब केवल पैसा जुटाना नहीं है सरकारी दस्तावेजों में आर्थिक आत्मनिर्भरता को केवल राजस्व जुटाने तक सीमित नहीं माना गया है इसके पीछे सोच यह है कि पंचायतों को स्थानीय जरूरतों के अनुसार प्राथमिकताएं तय करने और फैसले लेने की अधिक स्वतंत्रता मिले। यदि पंचायतों की अपनी आय होगी, तो वे यह तय कर पाएंगी कि गांव में सबसे जरूरी काम टूटी सड़क बनवाना है या पेयजल व्यवस्था सुधारना है या सार्वजनिक भवनों की मरम्मत कराना और सफाई व्यवस्था को मजबूत करना ज्यादा जरूरी है।

केंद्रीय पंचायतीराज मंत्रालय की रिपोर्ट में यह बात सामने आई कि पिछले कुछ वर्षों में ग्राम पंचायतों की भूमिका बदली है। वे अब केवल योजनाओं को लागू करने वाली संस्थाएं नहीं रह गई हैं, बल्कि ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार हैं। इसके बावजूद पंचायतों की वित्तीय निर्भरता की समस्या यथावत बनी हुई है। पंचायतों की आत्मनिर्भरता की वास्तविक स्थिति का अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि हाल में दिल्ली में दिए गए राष्ट्रीय पंचायत पुरस्कारों में देश भर की केवल चार पंचायतों को ही 'आत्मनिर्भर आधारभूत संरचना' श्रेणी में सम्मानित किया गया है। सर्वविदित है कि देश की अधिकांश ग्राम पंचायतों की आय का बड़ा हिस्सा राज्य और केंद्र सरकार से मिलने वाले अनुदानों से आता है अपने स्तर पर राजस्व जुटाने का अधिकार होने के बावजूद पंचायतों ने इस दिशा में अपेक्षित प्रगति नहीं की है।

सवाल है कि पंचायतें आय बढ़ाएंगी कैसे? कानूनी रूप से पंचायतों के पास कई अधिकार हैं। वे भवन कर लगा सकती हैं, सफाई कर और पथ-प्रकाश कर वसूल सकती हैं। यहां तक कि जल उपयोग शुल्क ले सकती हैं। गांवों में लगने वाले हाट बाजार, मेले, सामुदायिक भवनों, दुकानों के किराए और अन्य स्थानीय संसाधनों से भी आय अर्जित कर सकती है, लेकिन कागजों पर दिखाई देने वाले ये स्रोत यथार्थ के धरातल पर उतने प्रभावी नहीं होते। गांवों में कर वसूली का विषय केवल प्रशासनिक नहीं, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक भी है। सरपंच और वार्ड पंच उन्हीं लोगों के बीच रहते हैं, जिनसे उन्हें कर वसूलना होता है। ऐसे में कर लगाने या वसूली करने पर प्रायः विरोध का सामना करना पड़ता है।

भौगोलिक दृष्टि से बड़े राज्य राजस्थान पर नजर डालें तो चुनौती और स्पष्ट दिखाई देती है। यहां की अधिकांश पंचायतों के पास न तो बड़े बाजार हैं, न औद्योगिक इकाइयां और न ही पर्यटन से जुड़ी आय। ज्यादातर जिलों की पंचायतें आज भी मुख्य रूप से कृषि और सरकारी योजनाओं पर निर्भर हैं। राज्य की ज्यादातर ग्राम पंचायतों के पास ऐसे संसाधन नहीं हैं जिनसे पर्याप्त राजस्व प्राप्त हो सके। कुछ पंचायतों के पास बाजार, व्यावसायिक गतिविधियां, पर्यटन स्थल या आय के अन्य स्रोत मौजूद हैं, लेकिन अधिकांश पंचायतें कृषि आधारित अर्थव्यवस्था पर निर्भर हैं वहां स्थानीय आय बढ़ाने की संभावनाएं सीमित हैं। ऐसे में यह सवाल स्वाभाविक है कि क्या सभी पंचायतों को एक ही पैमाने से मापा जा सकता है? क्या सीमावर्ती रेगिस्तानी क्षेत्र की पंचायत और किसी विकसित कस्बे से सटी पंचायत की स्थिति एक समान है ? क्या आर्थिक रूप से कमजोर गांवों से भी वही अपेक्षा जायज है, जो अपेक्षाकृत संपन्न क्षेत्रों से की जाती है? इन सवालों के जवाब तलाशना जरूरी है, क्योंकि केवल लक्ष्य तय कर देने से उपलब्धियां हासिल कर पाना संभव नहीं होता है।

तमाम समस्याओं के बावजूद पंचायतों को आत्मनिर्भर बनाना जरूरी है, क्योंकि पंचायतों की आर्थिक मजबूती के बिना वास्तविक विकेंद्रीकरण संभव नहीं है। यदि पंचायतों के पास खुद के संसाधन होंगे, तो उन्हें छोटी-छोटी जरूरतों के लिए हर बार सरकार की ओर नहीं देखना पड़ेगा। आत्मनिर्भर होने की स्थिति में स्थानीय समस्याओं का समाधान अधिक तेजी से हो सकेगा और पंचायतें लोगों की अपेक्षाओं के अनुरूप विकास कार्य कर सकेंगी, लेकिन इसके लिए केवल राजस्व वसूली के लक्ष्य तय करना पर्याप्त नहीं होगा। सबसे पहले पंचायतों के संसाधनों

की वास्तविक स्थिति का आकलन करना होगा। यह समझना होगा कि किस पंचायत के पास आय के कौन-कौन से संभावित स्रोत मौजूद हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय करों की परंपरा कमजोर रही है, इसलिए नई कर व्यवस्था को स्वीकार करवाना आसान नहीं होगा।

आत्मनिर्भर पंचायत का अर्थ यह नहीं है कि वे अपने खर्च का पैसा खुद जुटाएं। इसका वास्तविक अर्थ यह है कि पंचायत अपने गांव के विकास की दिशा तय करने में सक्षम हो, लोगों की भागीदारी के साथ फैसले ले सकें और स्थानीय जरूरतों के अनुसार काम कर सकें। हमारे देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था की जड़ें गांवों में हैं। यदि पंचायतें आर्थिक रूप से मजबूत होंगी, तो इसका लाभ केवल गांवों को नहीं, बल्कि पूरे देश को मिलेगा। मगर इसके लिए समय तैयारी, क्षमता निर्माण और स्थानीय परिस्थितियों को समझने वाली नीतियों की जरूरत होगी। आत्मनिर्भर पंचायतों का विचार निश्चित रूप से सही है। अगर यह मूर्त रूप ले लेता है, तो इससे गांवों की सूरत बदल सकती है मगर इस विचार को धरातल पर उतारने के लिए गांव की हकीकत को समझना आवश्यक है।

गांवों की वास्तविकताओं को ध्यान में रख कर ही पंचायतों को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में सार्थक कदम उठाए जा सकते हैं असली चुनौती कर वसूली नहीं है, बल्कि पंचायतों में ऐसी क्षमता विकसित करना बड़ी चुनौती होगी, जिससे वे अपने संसाधनों की पहचान कर सकें, उनका बेहतर उपयोग कर सकें और गांव के लोगों का भरोसा जीत सकें। यदि यह काम हो गया, तो आत्मनिर्भर पंचायत केवल सरकारी लक्ष्य नहीं, बल्कि यह गांवों की बदलती तस्वीर की वास्तविक कहानी बन सकती है।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 03-07-26

विश्वसनीय सहयोगी

संपादकीय

जापान के साथ भारत के रिश्तों को मजबूत करने की दिशा में हुई कोशिशें स्वागतयोग्य हैं। जापान की प्रधानमंत्री सनाए ताकाइची पहली बार भारत आई हैं और वह भारत के साथ व्यापक संबंध सुधार की पक्षधर हैं। दोनों देशों के बीच आर्थिक सुरक्षा, रक्षा, स्वास्थ्य सेवा और प्रौद्योगिकी जैसे प्रमुख सहयोग क्षेत्रों पर हुई बहुत बातचीत खास रही है। एशिया में दोनों देशों की अर्थव्यवस्था आकार में दूसरे और तीसरे स्थान पर है। जापान लंबे समय तक भारत से काफी आगे रहा है, लेकिन विगत दशकों में भारत की तरक्की ने दोनों अर्थव्यवस्थाओं के बीच अंतर को कम कर दिया है। बहरहाल, प्रधानमंत्रियों की ताजा बैठक के दौरान दोनों पक्षों ने तीन महत्वपूर्ण दस्तावेजों को अपनाया है, इनमें आर्थिक सुरक्षा पर संयुक्त घोषणा, कृत्रिम बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में सहयोग और ऊर्जा पर संयुक्त

वक्तव्य शामिल हैं। कोई दोराय नहीं कि जापान पहले भी प्रौद्योगिकी के मामले में प्रेरणास्रोत रहा है और भारत को समय-समय पर तकनीकी सहयोग मिला है। साथ ही, भारत बड़ा बाजार है, जिसमें जापानी उत्पादों के लिए पर्याप्त जगह है। परस्पर व्यापार में जापान अभी भी भारत से आगे है और फायदे में है।

गौर करने की बात है, यह दोनों देशों के बीच आयोजित 16वां शिखर सम्मेलन था और दोनों देशों ने 120 सहयोग दस्तावेजों और 2 ट्रिलियन येन के निवेश सहित अनेक घोषणाएं की हैं। जापान वर्तमान में भारत का पांचवां सबसे बड़ा निवेशक है, जिसका कुल निवेश 48.17 अरब डॉलर है। जाहिर है, जापान का निवेश बढ़ने से भारत को व्यापक लाभ है। जापान सांस्कृतिक-कूटनीतिक रूप से भारत का हितैषी रहा है। दुनिया की जो दूसरी बड़ी अर्थव्यवस्थाएं हैं, उनसे अगर तुलना करें, तो जापान से संबंध विस्तार भारत के ज्यादा मुफीद है। अमेरिका और चीन के साथ हमारे आर्थिक संबंध खींचतान भरे रहे हैं, लेकिन ऐसी स्थिति कभी जापान के साथ नहीं आई है। एक समय था, जब तकनीक के मामले में हम सबसे पहले रूस या जापान की ओर देखते थे, पर विगत दशकों में अमेरिका से हमारी निकटता हुई है। यहां भारतीय राजनय को ध्यान रखना होगा कि बदलती दुनिया में भारत संतुलन साधकर चले। हम अमेरिका, रूस, चीन, फ्रांस और जापान जैसी अर्थव्यवस्थाओं से अलग चलते हुए तेजी से विकास नहीं कर सकते। हमें इनके साथ तालमेल बिठाकर चलना होगा और जहां जरूरत पड़ेगी, वहां अपने हित में प्रतिद्वंद्विता भी करनी पड़ेगी।

आजाद भारत के इतिहास में दोनों देशों के बीच आधिकारिक राजनयिक संबंधों को अगले साल 75 वर्ष हो जाएंगे। साल 2027 में दोनों देश द्विपक्षीय संबंधों की 75वीं वर्षगांठ मनाएंगे। इस महत्वपूर्ण मुकाम का अंदाजा दोनों ही देशों को है और नाना प्रकार के आयोजनों या गतिविधियों की तैयारी चल रही है। जापान की प्रधानमंत्री सनाए ताकाइची की यह यात्रा विकसित भारत के लिए एक पड़ाव साबित होनी चाहिए। जापान ने एक हजार जैव गैस और जैविक उर्वरक संयंत्र स्थापित करने का वादा किया है, इससे भारत के गांवों में समृद्धि और ग्रामीण आजीविका को नई शक्ति मिलेगी। शुरू से ही जापान एक ऐसा विश्वसनीय देश है, जिसे हम जमीनी विकास में सहयोगी बना सकते हैं। दोनों देशों को समुद्री सुरक्षा पर सहयोग का दायरा बढ़ाना चाहिए। अच्छी बात है, जापान हमसे रक्षा सहयोग बढ़ाना चाहता है। संयोग से दोनों ही देशों की रक्षा चुनौतियां एक हद तक साझा हैं। भारत को इस दिशा में अनुकूल कदम उठाने की जरूरत है।

Date: 03-07-26

भारत-जापान रिश्तों में नई गर्मजोशी

शशांक, (पूर्व विदेश सचिव)

जापान की प्रधानमंत्री सनाए ताकाइची वैसे तो 'भारत-जापान वार्षिक शिखर सम्मेलन' के लिए तीन दिवसीय दौरे पर नई दिल्ली आई हैं, मगर तेजी से बदलते भू-राजनीतिक परिदृश्य में उनके इस दौरे की खास अहमियत है और यह बात दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों के एक-दूसरे के प्रति आत्मीय संबोधन से भी ध्वनित होती है। ताकाइची ने कहा भी है कि भारत-जापान संबंध एक नए दौर में प्रवेश कर रहा है।

भारत और जापान के सभ्यतागत संबंध बहुत पुराने हैं। कई भारतीय देवी-देवताओं की वहां आज भी पूजा होती है। हालांकि, दूसरे विश्व-युद्ध के बाद से लेकर शीत युद्ध के अंत तक एक लंबा अंतराल ऐसा रहा, जब हमारे संबंधों पर धूल की मोटी परत जमी रही। दरअसल, एशिया में जापान पहला देश है, जिसने पश्चिमी औद्योगिक क्रांति का गहन अध्ययन किया और उसे अपनाया। इससे उसकी तरक्की का लोहा पूरे एशिया ने माना। 1904-05 के रूस-जापान युद्ध में जापानी साम्राज्य ने रूस की विशाल सेना को शिकस्त देकर पूरी दुनिया को चौंका दिया था। तब एशिया के सभी मुल्क बड़े खुश हुए कि जापान ने यूरोप के अहंकार को तोड़ दिया। जापान उस वक्त एशिया की पहचान बनकर उभरा था।

दूसरे विश्व युद्ध के दौरान हुए परमाणु हमले के बाद जापान पूरी तरह से अमेरिका के प्रभाव में आ गया। शीत युद्ध के दौरान उसकी यही सोच रही कि भारत कम्युनिस्ट सोवियत संघ का मित्र है और पश्चिमी उदार लोकतंत्रों की बात नहीं मानता। शीत युद्ध की समाप्ति के बाद नई दिल्ली ने अमेरिका और पश्चिम में रूढ़ इस धारणा को तोड़ने और उनके साथ अपने रिश्ते सुधारने के लिए काफी प्रयास किया। खुद रूस उस समय पश्चिमपरस्त नीतियां अपनाने लगा था। इसलिए भारत ने भी नई नीतियां अपनाईं।

मुझे याद है, सन् 1994 से 1999 तक जब मैं कोरिया में राजदूत था, अमेरिका की दिलचस्पी चीन में बढ़ चली थी और उससे प्रभावित कोरिया व जापान भी अपने निवेश के लिए बीजिंग का ही रुख कर रहे थे। तब नई दिल्ली ने महसूस किया कि यदि भारत के रिश्ते अमेरिका के साथ नहीं सुधरे, तो जापान व कोरिया जैसे देश भी हमारी ओर सकारात्मक रुख नहीं अपना पाएंगे। 1990 के दशक में कोरिया जब भारत में आया, तो जापान को महसूस हुआ कि अमेरिका के मित्र देश भी भारत में अपनी प्रौद्योगिकी व निवेश ला रहे हैं, तब उसने भी एक नई शुरुआत की।

जापानी प्रधानमंत्री शिंजो आबे का कार्यकाल भारत-जापान संबंधों में एक निर्णायक मोड़ साबित हुआ। उन्होंने ही एशिया की दोनों बड़ी सभ्यताओं के रिश्तों पर जमी धूल को साफ करने में विशेष दिलचस्पी दिखाई। आबे एक दूरदर्शी राजनेता थे। उन्होंने यह देख लिया था कि आगे चलकर चीन विस्तारवादी नीतियां अपना सकता है, लिहाजा भारत का साथ होना बहुत जरूरी है। हमने भी दक्षिण-पूर्व एशिया से अपने द्विपक्षीय संबंधों को नए सिरे से गढ़ना शुरू किया, इसमें खास तौर से सिंगापुर का बहुत बड़ा रोल रहा। उसके बाद हमने पूर्वी एशिया में अपने संबंधों को विस्तार दिया और उसमें जापान एक महत्वपूर्ण साझीदार देश के रूप में उभरा।

भारत-जापान संबंध के लिहाज से मौजूदा समय इसलिए अधिक अहम है कि पश्चिम एशिया के संकट ने इन दोनों देशों, बल्कि तमाम एशियाई देशों को खासा नुकसान पहुंचाया है। इसके मूल में राष्ट्रपति ट्रंप की 'अमेरिका फर्स्ट' नीति है, जिसके तहत वाशिंगटन दुनिया के तमाम तेल संसाधनों को नियंत्रित करना चाहता है। इस बात को अमेरिका के एशियाई मित्र देश भी अब बखूबी समझ रहे हैं कि इससे उनको बहुत नुकसान होने वाला है।

इस बीच एक अन्य घटनाक्रम ने भी एशिया के देशों को चौकन्ना कर दिया है। राष्ट्रपति ट्रंप के मई के बीजिंग दौरे से एशियाई देशों में यह आशंका गहरी हो गई है कि ये दोनों मिलकर जी-2 ग्रुप बनाना चाहते हैं, जिसमें एशिया के देशों की मुख्तारी चीन को सौंपी जाएगी और अमेरिका पश्चिमी देशों पर अपना दबदबा रखेगा। ऐसे में, एशियाई देशों के राजनीतिक नेतृत्व ने समझ लिया है कि उन्हें ऐसी किसी सूरत का मुकाबला कैसे करना है? प्रधानमंत्री मोदी तो पहले से ही जापान को काफी प्रोत्साहित करते रहे हैं कि वह भारत में अपना निवेश बढ़ाए। जापान ने काफी निवेश किए भी हैं। मेट्रो के बाद बुलेट ट्रेन परियोजना इसकी नजीर है। इसमें उसने काफी टेक्नोलॉजी का हस्तांतरण किया है। जाहिर है, प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण से भारतीय पेशेवरों को काफी लाभ होगा, बल्कि जापान ने 50 हजार युवा भारतीय पेशेवरों को अपने यहां बुलाने का वादा भी किया है।

जापान को यह मालूम है कि भारत के पास एक विशाल बाजार है और उसे व कोरिया को यह भी इत्मीनान हो चुका है कि अगर भारत में प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण किया जाए, तो भारतीय उसे काफी अच्छी तरह से आत्मसात कर लेते हैं। मैंने जापान व कोरिया की कंपनियों का अध्ययन किया, तो दोनों जगह पाया कि उनका यही आकलन था, भारतीय चीन या किसी अन्य देश के लोगों के मुकाबले कहीं बेहतर तरीके से आत्मसात करते हैं। जापान ने अब अगले दस साल में भारत में छह लाख करोड़ रुपये के निवेश का लक्ष्य घोषित किया है, जो काफी महत्वपूर्ण कदम है।

यह सुखद है कि प्रधानमंत्री ताकाइची के इस दौरे में आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस (एआई) और सेमीकंडक्टर के क्षेत्र में साझेदारी बढ़ाने के लिए सहमति पत्र पर दस्तखत हुए हैं। हम जानते हैं कि एआई और क्वांटम कंप्यूटिंग में जापान काफी उन्नत देश है। आने वाले समय में हमें जापान की विशेषज्ञता का लाभ मिल सकेगा। हिंद-प्रशांत क्षेत्र में दोनों देशों के हित साझा हैं। इनको मालूम है कि यहां यदि आपूर्ति शृंखला बनती है, तो इससे दोनों देशों को काफी फायदा होगा और इस क्षेत्र में शांति व सुरक्षा का माहौल बनाने में दोनों साथ आ सकते हैं। पहले हमने अमेरिका को इस क्षेत्र में आगे किया था कि वह हमें इसमें मदद करेगा, मगर उसका रुख भरोसेमंद नहीं रहा, इसलिए एशियाई देशों को लग गया है कि हमें आपस में ही मिलकर आगे चलना है। इसलिए अगर जापान के साथ भविष्य में हमारा सप्लाई चेन संबंध कायम हुआ, तो यह सबसे महत्वपूर्ण सहयोग होगा। जापान में भारत के लिए आदर का भाव है, जो पश्चिम में नदारद है। यह बात हमें उसका स्वाभाविक मित्र बनाता है।